जाति-गायन

यहाँ ग्राम व मूर्च्छना के साथ-साथ जाति-गायन को भी स्पष्ट कर देना आवश्यक प्रतीत होता है। प्राचीन काल में 'राग' नाम की कोई वस्तु नहीं थी। 'राग' के स्थान पर उस समय ये जातियाँ वास्तव में 'मूल-राग' थीं। इन जातियों में विकार होने से अनेक रागों का जन्म हुआ। जाति के दस लक्षण 'अंश, ग्रह, तार, मंद्र,न्यास, अपन्यास, अल्पत्व, बहुत्व, षाडव और औडव' बताए गए हैं; यही प्राचीन रागों के दस लक्षण भी हैं। इनका विवरण इस प्रकार है :—

अंश

जाति-गायन में मूर्च्छनाओं के प्रारम्भिक स्वर को 'अंश स्वर' कहते थे। दूसरे शब्दों में 'अंश' स्वर से ही सप्तक को प्रारम्भ करते थे। इसी स्वर को 'प्राण-स्वर' या 'जीव-स्वर' भी कहते थे। परन्तु किसी एक जाति में एक से अधिक अंश स्वर भी हो सकते थे। वाद्य-विधि में इसी को 'स्थायी स्वर' कहा गया है। मृदंग इत्यादि वाद्य इसी स्वर में मिलाये जाते थे। आज यदि जाति-गायन का प्रयोग किया जाए तो सितार या वीणा की चिकारियाँ इसी स्थायी स्वर में मिलाई जायेंगी। निरंतर गूंजते रहने के कारण ही इसका नाम 'स्थायी' है। आज मेल-पद्धति एवं ठाठ पद्धति में प्रत्येक स्थायी स्वर को 'सा' कहा जाने लगा है। फलस्वरूप आज प्रत्येक मूर्च्छना के सात स्वर 'स रे ग म प ध नि सं' बन गए हैं।'अंश' स्वर के 'संवादी'स्वर का कभी लोप नहीं होता था (अर्थात् उसे वर्जित नहीं करते थे) इसीलिए उसे 'वादी-स्वर' भी कहा जाता था।

ग्रह

जिस स्वर से जाति-गायन प्रारम्भ होता था, उस स्वर को 'ग्रह स्वर' कहते थे। जब किसी जाति में गायन-वादन का प्रारम्भ अंश स्वर से होता था तो उस अवस्था में उसे 'ग्रह-स्वर' भी कहते थे।

तार-मन्द्र

तार-मन्द्र का अभिप्राय यह था कि किस जाति को किस स्वर तक तार-सप्तक में और किस स्वर तक मन्द्र-सप्तक में गाया जाए। कुछ विद्वानों का मत यह भी है कि किस जाति-विशेष में तार-सप्तक प्रबल रहेगा और किस में मन्द्र-सप्तक। इसी बात को प्रकट करने के लिए तार-मंद्र का उपयोग किया है।

न्यास

जाति-गायन में जिस स्वर पर 'अङ्ग' (गीत या वाद्य प्रबन्ध) की समाप्ति होती हो वह स्वर 'न्यास' कहलाता है। इस आधार पर आप गीतों की समाप्ति के स्वर को 'न्यास' कह सकते हैं।

अपन्यास

जिस स्वर पर गीत के मध्य की समाप्ति होती है, उस स्वर को 'अपन्यास' स्वर कहते हैं।

सन्यास

गीत की प्रथम 'विदारी' * को समाप्त करने वाला (अंश का संवादी या अनुवादी) स्वर 'सन्यास' कहलाता है।

विन्यास

जो स्वर विदारी के खण्ड-रूप पदों, अर्थात् शब्दों के अन्त में रहता है वह 'विन्यास' कहलाता है।

ग्रह, न्यासादि के स्वरों का प्रयोग राग-गायन से पूर्व जबकि जाति-गायन होता था, उस समय किया जाता था। अतः आज के विद्यार्थियों की समझ में इनकी परिभाषाएँ स्पष्ट नहीं होतीं। इन्हें समझने के लिए आप तनिक अनुमान कीजिए कि आप एक ऐसा गीत सुन रहे हैं जो केवल आठ पंक्तियों में गाया जा रहा है। (आप अपनी समझ के लिए गीत में पूर्व की चार पंक्तियों को स्थायी और अन्त की चार पंक्तियों को अन्तरा भी समझ सकते हैं।) इनमें गीत जिस स्वर से प्रारम्भ होगा उस 'ग्रह स्वर' और जहाँ समाप्त होगा उसे 'न्यास स्वर' कहेंगे। गीत का पूर्वार्द्ध जहाँ समाप्त होगा (आपकी दृष्टि से स्थायी का अन्तिम स्वर) 'अपन्यास स्वर' कहलायेगा। गीत के प्रथम खण्ड की समाप्ति (अर्थात् दूसरी पंक्ति का अंतिम स्वर) 'सन्यास' होगा।

जो विदारी के शब्दों के अन्त में (अर्थात् प्रथम पंक्ति का या अन्य स्थानों पर) आने वाला स्वर है, उसे 'विन्यास' कहते हैं। आगे दिया हुआ चित्र इसे अधिक स्पष्ट कर देगा। यहाँ पहली चार रेखाएँ गीत के पूर्वार्द्ध को और अन्तिम चार रेखाएँ गीत के उत्तरार्द्ध को बताती हैं। देखिये :—

* गीत के छोटे-बड़े भाग अथवा गीत-खण्ड को विदारी कहते हैं।

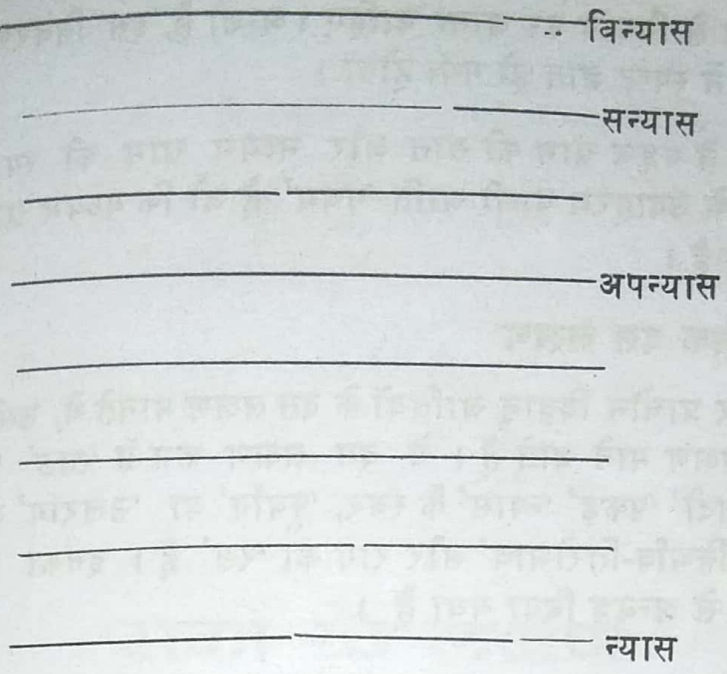

इनके अतिरिक्त अन्य पंक्तियों पर जो अन्तिम शेष स्वर होंगे वे सब विन्यास के स्वर कहलायेंगे। यदि गीत १६ पंक्तियों का है तो अपन्यास आठवीं पर और सन्यास चौथी पंक्ति का अन्तिम स्वर होगा। यदि गीत में बारह पंक्तियाँ हैं तो ये क्रमशः छठी और तीसरी पंक्तियों पर होंगे।

अलपत्व-बहुत्व

जब तक कुछ स्वरों पर अधिक और कुछ पर कम देर तक न ठहरा जाए, राग नहीं बनता, इसलिए जिन स्वरों पर अधिक देर तक ठहरा जाए उन्हें 'अभ्यास-मूलक-बहुत्व' और जिन पर भले ही कम ठहरें, परन्तु छोड़ देने से राग-हानि होती हो, उन्हें 'अलंघन-मूलक-बहुत्व' के स्वर कहते हैं। इसी प्रकार जिन स्वरों को बिल-कुल छोड़ दिया जाए, उन्हें 'लंघन-मूलक-अलपत्व' और जिन पर कम ठहराव हो, उन्हें 'अभ्यास मूलक-अलपत्व' के स्वर कहा जाता है।

औडव-षाडव

इनका सम्बन्ध राग में प्रयुक्त होने वाले स्वरों की संख्याओं से है लेकिन अभि-प्राय औडव, षाडव और सम्पूर्ण राग-जातियों से है।

अब हम यहाँ एक जाति 'पंचमी' का उदाहरण महर्षि भरत के अनुसार दे रहे हैं। 'पंचमी' जाति में दो स्वर पंचम और ऋषभ अंश होते हैं। (अर्थात् इस जाति का गायन-वादन इन स्वरों में से किसी एक से प्रारम्भ होगा।) निषाद, पंचम व ऋषभ अपन्यास के स्वर हैं। (अर्थात् रचना के मध्य की समाप्ति का स्वर इन तीनों में से ही कोई होना चाहिए।) न्यास का स्वर पंचम है। (अर्थात् रचना की समाप्ति भी पंचम पर ही होनी चाहिए।) गांधार लोप होने से षाडव और गांधार-निषाद के लोप से औडव करना चाहिए। इस जाति में स, ग, म दुर्बल हैं। मध्यम-ऋषभ की

संगति है। गांधार से निषाद पर जाना चाहिए। आशा है, इस विवरण से आपको 'जाति' के विषय में स्पष्ट ज्ञान हो गया होगा।

भरत मुनि ने षड्ज ग्राम की सात और मध्यम ग्राम की ग्यारह जातियाँ गिनाई हैं। ऊपर के उदाहरण वाली जाति 'पंचम' है जो कि मध्यम ग्राम की ग्यारह जातियों में से एक है।

रागों के आधुनिक दस लक्षण

जिस प्रकार प्राचीन विद्वान् जातियों के दस लक्षण मानते थे, उसी प्रकार आज रागों के भी दस लक्षण माने जाते हैं। ये दस लक्षण क्रम से 'ठाठ' 'अरोहावरोह' 'जाति' 'वादी-संवादी' 'पकड़' 'न्यास' के स्वर, 'पूर्वांग' या 'उत्तरांग' की 'प्रधानता' 'गायन-समय' 'आविर्भाव-तिरोभाव' और राग का 'रस' हैं। इनका विवरण इसी पुस्तक में विस्तार से अन्यत्र दिया गया है।